International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 6; November 2016; Page No. 29-31

कैवल्य का स्वरूप : योगसूत्र तथा अद्वैतवेदान्त के परिपेक्ष्य में

[1] भानुप्रताप सिंह बुन्देला, [2] डॉ0 उपेन्द्र बाबू खत्री, [3] डॉ0 अखिलेश कुमार सिंह

[1] शोधार्थी एम0 फिल0 (योग), सॉची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश, भारत।
[2] सहायक प्राध्यापक योग विभाग, सॉची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश, भारत।
[3] सहायक प्राध्यापक आयुर्वेद विभाग, सॉची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश

कैवल्य का आशय समाधि की चरम अवस्था या उसके फल से है, तथा निर्वाण या मोक्ष इसके पर्यायवाची शब्द है। वेदान्त मे इस चरम अवस्था को आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान या मोक्ष कहा जाता है। पतंजलि जी के अनुसार कैवल्य ही योग का चरम लक्ष्य है। ''कैवल्य का स्वरूप'' वर्णन करते समय डॉ. साधना दौनेरिया जी ने अपने ग्रंथ पातंजलयोगसार मे बताया है, कि ''केवल का अर्थ है, केवलता या अकेलापन अर्थात् आत्मा का त्रिगुणात्मक प्रकृति के विकारभूत स्थूल सूक्ष्म कारण आदि शरीरों और तज्जन्य दिव्य–अदिव्य उपभोगों से छूट कर अपने चिन्मात्र स्वरूप से अवस्थित हो जाना।'' ब्रह्मज्ञान, आत्मज्ञान, निर्वाण, मुक्ति या मोक्ष यह कैवल्य के ही समानार्थी है, क्योकि पतंजलि जी का योगसूत्र राजयोग का ग्रंथ है संभवतः इस कारण से वहॉ उन्होने अपने ग्रंथ मे ज्ञानयोग ग्रंथों (वेदान्त) के ब्रह्मज्ञान या आत्मज्ञान शब्द का स्पष्ट वर्णन नही किया है। किन्तु दोनो ग्रंथों में द्रष्टा का अपने स्वरूप को जान लेना या अपने स्वरूप मे प्रतिष्ठित होने का स्पष्ट वर्णन किया है। पतंजलि जी ने अपने ग्रंथ योगसूत्र में कैवल्य का वर्णन चार स्थानों पर किया है। (प.यो.सू. 1/3, 2/25, 3/55 व 4/34) जिसका नीचे विशेष रूप से वर्णन किया गया है।

मूलशब्द: सांख्यसूत्र, योगसूत्र, वेदान्त, ईश्वरवाद, कैवल्य तथा आत्मानुभूति।

प्रस्तावना

योगसूत्र का कैवल्य (द्रष्टा की स्वरूप स्थिति) तथा वेदान्त की अद्वैतानुभूति (ब्रह्मज्ञान या आत्मज्ञान) दोनों स्वरूपगत एक ही जान पड़ते है। क्योकि दोनों ही स्थिति चाहे राजयोग (योगसूत्र) का कैवल्य हो या ज्ञानयोग (वेदान्त) की अद्वैतानुभूति दोनों ही स्थिति में द्रष्टा अपने ही स्वरूप में प्रतिष्ठित हो रहा है। वहॉ किसी सगुण देवी देवता के दर्शन नही अपितु अपने ही स्वरूप का ज्ञान हो रहा है। प्रकृति के गुणो का प्रतिप्रसव हो जाने पर द्रष्टा अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है।

योगसूत्र

पतंजलि मुनि योगसूत्र के रचियता है। उनका काल लगभग बिक्रमी से 200 वर्ष पूर्व या आसपास माना जाता है। तथा कुछ विद्वान उन्हें राजा पुष्यमित्र शुंग के समकालीन तथा उन्ही के राजपुरोहित भी मानते है।

योगसूत्र की रचना उन्होने योग को दर्शनिक स्वरूप देने तथा उसके विखरे तत्वों को एक निश्चित स्वरूप देने के उद्देश से की है। इसके पहले सूत्र से स्पष्ट होता है कि यह अतिप्राचीन परम्परा है।

अथ योगानुशासनम्।। [1]

अनुशासन का आशय किसी प्राचीन परंपरा के पालन से है। हिरण्यगर्भ को योग के आदि वक्ता माना गया है। महाभारत में वर्णन है, कि सांख्य के आदि वक्ता कपिल एवं हिरण्यगर्भ ही योग के आदि वक्ता है। उससे प्राचीन कोई नही है। उन्हीं ने योग के उपकारक ज्ञान को संसार में प्रकट किया है।

सांख्यस्य वक्ता कपिलः परमर्षिः स उच्यते।
हिरण्यगर्भ योगस्य वक्ता नान्यः पुरातनः।।[2]

पतंजलि योगसूत्र मे योग का वर्णन करते हुऐ कहते हैः–

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।।[3]

अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध योग (समाधि) है।

तब क्या होता है जब चित्त की वृतियों का निरोध हो जाता है। तब कहते है,

तदा दृष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।।[4]

तब दृष्टा (पुरूष/आत्मा) अपने स्वरूप मे अवस्थित हो जाता है।

यहॉ महर्षि पतंजलि जी ने कैवल्य का स्वरूप वर्णन किया है। जब जीव या द्रष्टा माया या अज्ञानवश अपने स्वरूप को नही जान पाया था। तब तक ही माया या प्रकृति अथवा प्रकृति के भौतिक पदार्थ उसे प्रभावित करते है। किन्तु जब पुरूष (आत्मा) को प्रकृति (माया) से पृथक अपने स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। तब वह अपने स्वरूप में प्रतिष्ठत हो जाता है। यह स्वरूप प्रतिष्ठा ही कैवल्य या आत्मज्ञान ही मोक्ष है।

यह मोक्ष है, तब बन्धन क्या है। इससे विपरीत स्थिति ही बंधन है। जब द्रष्टा दृश्य को ही सच मान बैठता है और अपने बद्ध रूप को ही सच स्वीकार कर लेता है। वेदान्त के अनुसार जब वह अनित्य जगत (माया) को ही सत्य मान लेता है। तब वह बद्ध जीव होता है। माया के पाश से बंधे होने के कारण ही उसे पशु तथा माया के स्वामी महादेव को पशुपति कहा जाता है। जो उन बद्ध जीवों तथा माया का भी स्वामी होता है। जीव की इस बद्ध अवस्था का क्या कारण है तब महर्षि पतंजलि जी कहते है।

तस्य हेतुरविद्या।।[5]

[1] (प.यो.सू. 1/1)

[2] (महाभारत–12/349/65 एवं पातंजलयोगप्रदीप–पेज नं. 69)
[3] (प.यो.सू. 1/2)
[4] (प.यो.सू. 1/3)
[5] (प.यो.सू. 2/24)

अर्थात् द्रष्टा (पुरूष) को अपने स्वरूप के अदर्शनरूपी संयोग का कारण अविद्या है।

तदभावात् संयोगाभावो हानं तद् दृशेः कैवल्यम्।।[6]

उस (अविद्या) के अभाव से (अदर्शनरूपी) संयोग का अभाव 'हान' है। वह चिति–शक्ति का कैवल्य है।

सत्त्वपुरूषयोः शृद्धिसाम्ये कैवल्यमिति।।[7]

चित्त और पुरूष की समान रूप से शुद्धि होने पर कैवल्य प्राप्त होता है। अर्थात् सत्त्व–चित्त का पुरूष के समान शुद्ध होने का आशय यह है कि उसमें रजस् तथा तमस् का मैल इतना दूर हो कि वह पुरूष को चित्त का भेद दिखाकर गुणों के परिणाम का यथार्थ ज्ञान करा सके एवं पुरूष को अपना साक्षात् कराने योग्य हो जाये।

पुरूषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवःकैवल्यं
स्वरूप प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।।[8]

पुरूषार्थ से शुन्य हुऐ गुणों का अपने कारण मे ही लीन हो जाना अर्थात् जहॉ जिस कारण से जो गुण उत्पन्न हुऐ थे उनका पुनः क्रमशः उसी मे लीन होना विद्वानों ने प्रतिप्रसव कहा है। अथवा
चिति शक्ति का अपने स्वरूप मे अवस्थित हो जाना ही कैवल्य है। जैसा कि पतंजलि जी ने प्रथमपाद के तीसरे सूत्र में ही स्पष्ट कहा है।

तदा दृष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।।[9]

वेदान्त

वेदान्त भी आत्मज्ञान को ही ब्रह्मज्ञान मानता है एवं दोनों ही समानार्थी है एक ही भाव को व्यक्त करते है। महावाक्यों से स्पष्ट होता है, कि अहंब्रह्मास्मि, अयमात्मा ब्रह्म, प्रज्ञानंब्रह्म तथा शिवोऽहम् आदि अनुभूति आत्मज्ञान या ब्रह्मज्ञान में होती है। ऐसा पूर्व विद्वानों का मत है। जो विवेकदृष्टि से देखने पर सत्य ही ज्ञात होता है।

''अयमात्मा ब्रह्म''[10]
यह आत्मा ही ब्रह्म है।

कैवल्य प्राप्ति पर जब पुरूष अपने स्वरूप में अवस्थित होता है तब ही ''तदा दृष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।।''[11] की अवस्था होती है।
तब वह उन अनुभूतियों को ही अनुभव करता है जो वेदान्त (उपनिषद्) के महावाक्य में कहे जाते है। जैसे :–

''प्रज्ञानं ब्रह्म''[12]
प्रज्ञा ही ब्रह्म है
''अहंब्रह्मास्मि''[13]
मै ब्रह्म हूँ
''तत्त्वमसि''[14]
वह ब्रह्म तुम ही हो।
''अयमात्मा ब्रह्म''[15]
यह आत्मा ब्रह्म

योगसूत्र मे तो कैवल्य का आशय ही विशुद्ध चैतन्य से है। वेदान्त (उपनिषद्) तो स्पष्ट रूप से जीव और ब्रह्म की एकता स्वीकार करता है, एवं आत्मा तथा ब्रह्म को एक ही मानता है। इस प्रकार से आत्मज्ञान या ब्रह्मज्ञान एक ही है। पतंजलि योगसूत्र में द्रष्टा को स्वरूप प्रतिष्ठा या अपने स्वरूप का ज्ञान होने के पश्चात् भी ईश्वर या ब्रह्म जैसी कोई और श्रेष्ठ सत्ता का ज्ञान प्राप्त करना शेष रह जाता हो, तो ऐसा पतंजलि जी को अभिष्ट नही होगा।
अतः द्रष्टा की स्वरूप प्रतिष्ठा तथा वेदान्त का आत्मज्ञान (ब्रह्मज्ञान) एक ही मानना होगा जिसके बाद दोनों दर्शन के लिये और कुछ भी प्राप्त करने योग्य (श्रेष्ठ पद) नही रह जाता है।

सांख्य एवं योग

योग विद्या को दार्शनिक महत्व देने हेतु ही योगसूत्र की रचना हुई है। योग दर्शन (योग साधना के प्रायौगिक महत्व का दर्शन होने के साथ ही) उससे पूर्व रचित सांख्य दर्शन का ही प्रायौगिक स्वरूप है। कपिल मुनि ने सांख्य का ज्ञान अपने शिष्य आसुरि को दिया था। वह ''तत्व समास'' के नाम से प्रसिद्ध है। सांख्य मे प्रकृति तथा पुरूष को भिन्न एवं स्वतंत्र तत्व माना है। इनकें मिलने से ही सृष्टि होती है तथा इनकें प्रथकत्व के ज्ञान से ही मुक्ति होती है। इस प्रकृति व पुरूष के ज्ञान को ही विवेकज्ञान माना है अतः ''सम्यक् ख्यानम् इति सांख्य'' अर्थात् जो विवेक ज्ञान है, वही सांख्य है या जो विवेकज्ञान का दर्शन वह सांख्य दर्शन है। वेदान्त (उपनिषद्) की तरह सांख्य भी ज्ञान योग का दर्शन है। सांख्यदर्शन में 25 तत्वों का वर्णन मिलता है। स्वतंत्र पुरूष तथा प्रधान प्रकृति एवं प्रकृति से उत्पन्न अन्य 23 तत्व।
वे है– महत्तत्व (बुद्धि), अहंकार, मन, 5 ज्ञानेन्द्रियॉ (श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिव्हा व नासिका), 5 कर्मेन्द्रियॉ (हस्त, पाद, मुख, गुदा व उपस्थ), 5 तनमात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस व गंध), तथा 5 महाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वि)।
उपरोक्त 25 तत्वों की गणना के कारण भी संभवतः इस ग्रंथ का नाम सांख्य दर्शन पड़ा है। 25 तत्वों का वर्णन सांख्यसूत्र या ''तत्व समास'' के सूत्र में प्राप्त होता है, किन्तु इसमें मात्र 25 सूत्रों का ही वर्णन मिलता है। कहीं कहीं हमें 6वे तथा 7वे सूत्र तथा 8वे, 9वे व 10वे सूत्र को जोड़ देने पर इन सूत्रों की संख्या 22 भी मिलती है। इससे हमें सांख्य का बहुत कुछ ज्ञान तो हो जाता है। यद्यापि सूत्र आशय ही उन मन्त्रों या पदों से होता जो ''गागर में सागर'' भर दें। इस उद्देश्य से ''तत्व समास'' का प्रत्येक सूत्र अपने भावों को पूर्ण व्यक्त तो करता है, किन्तु फिर भी उस विशद्ज्ञान का वर्णन करने में सूत्र की संख्या आपर्यात् सी जान पड़ती है। इससे ज्ञात होता है कि सांख्य शास्त्र के इस ग्रंथ के कुछ सूत्र अवश्य ही लुप्त हो गये है।
सांख्य दर्शन के इन 25 तत्वों को आधार बना कर पतंजलि जी ने अपने ग्रंथ योगसूत्र की रचना की है। तथा सांख्य के 25 तत्वों के साथ 26वॉ तत्व ईश्वर भी जोड़ा है। ईश्वर को योगसूत्र में पुरूष विशेष कहा है। जो भक्त या योगसाधक को योग साधना में समाधि की प्राप्ति में सहयोग अथवा मार्गदर्शन करते है। चित्त को शुद्ध व निर्मल बनाने हेतु पतंजलि जी ने तप, स्वाध्याय व ईश्वरप्रणिधान (भक्ति) के रूप में क्रियायोग का वर्णन किया है।

तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।।[16]

इस प्रकार तप (दुःख–सुखादि द्वंदों को सहन करना), स्वाध्याय (आर्ष ग्रंथों का पठन–पाठन) एवं ईश्वरप्रणिधान (ईश्वर भक्ति) से समाधि की सिद्धि एवं अविद्यादि क्लेशों का तनू (दुर्बल) होना क्रियायोग का फल है।

---

[6] (प.यो.सू. 2/25)
[7] (प.यो.सू. 3/55)
[8] (प.यो.सू. 4/34)
[9] (प.यो.सू. 1/3)
[10] (माण्डूक्योपनिषद्–2/अथर्वेद)
[11] (प.यो.सू. 1/3)
[12] (ऐतरेयोपनिषद्–3–1–3/ऋग्वेद)
[13] (बृहदारण्यकोपनिषद्–1–4–10/यजुर्वेद)
[14] (छान्दोग्योपनिषद्–6–8–7/सामवेद)
[15] (माण्डूक्योपनिषद्–2/अथर्वेद)
[16] (प.यो.सू. 2/1)

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च।।[17]

ईश्वर तत्व को जोड़ने पर योगसूत्र में तत्वों की सांख्या 26 हो जाती है तथा इसी कारण योगसूत्र को सेश्वर सांख्य भी कहते हैं। सांख्य के ग्रंथ ''तत्वसमास'' में ईश्वर का वर्णन तो नही मिलता है किन्तु कुछ विद्वान तत्वसमास के सूत्रों को अपर्याप्त मानते है एवं उसके कुछ महत्वपूर्ण सूत्रों का लुप्त होना मानते है। उनका मानना है कि कपिल मुनि जैसा आदि विद्वान अनिश्वरवादी नही हो सकता है। तथा पतंजलि जी ने ईश्वर का वर्णन किया है तो कुछ संभावना हो सकती है कि कपिल ने भी ईश्वर तत्व का वर्णन किया हो जो संभवतः कलान्तर में तत्वसमास से लुप्त हो गये है। संभावना यह भी बनती है कि जैन तथा बौद्ध जैसे अनिश्वरवादी दर्शन के प्रभाव से या तुलना करने हेतु कुछ अंशों को हटा दिया गया हो। किन्तु यह संभावना कम ही हो सकती है क्योकि कोई भी दर्शन को मानने वाला अपने दर्शन के मूल स्वरूप को नही परिवर्तित कर सकता

अतः प्राचीन सांख्य सेश्वर भी रहा हो तो भी जिस प्रकार कई ग्रंथ हमें नष्टप्राय अवस्था में मिले उसी प्रकार कालान्तर की प्रचण्ड वायुवेग में सांख्य (तत्वसमास) के भी कुछ अंश लुप्त हो गये हों तथा हमें सांख्य दर्शन का आज वर्तमान में स्वरूप देखने को मिलता है, वह संभवतः अधुरा ही हो। इसका एक कारण यह भी है,कि जो कपिल मुनि ईश्वर द्वारा प्रदाय वेद को प्रमाण रूप में स्वीकार करते हो वह ईश्वर को ही न स्वीकार करें यह बात उचित नही जान पड़ती है।

अतः बहुत संभावना है, कि कपिलमुनि द्वारा वर्णित सांख्य संभवतः सेश्वर रहा हो। यही कारण है, कपिल मुनि के सांख्य शास्त्र का अंगीकार करने वाले पतंजलि जी ने भी अपने योगसूत्र में ईश्वर को स्वीकार किया है।

उपसंहार

योगसूत्र तथा वेदान्त (उपनिषद्) आदि ग्रंथों का अध्ययन करने पर हमें कैवल्य के स्वरूप का समुचित ज्ञान हो जाता है। तथा सांख्य की तत्व मीमांसा भी हमें प्रकृति तथा उसके तत्वों का तथा पुरूष के स्वरूप एवं प्रकृति से उसकी भिन्ना व स्वतंत्रता का ज्ञान कराने में सक्षम् है। वेदान्त (उपनिषदों) के अध्ययन से ब्रह्मज्ञान के विषय में अवश्यक ज्ञानार्जन होता है। इस प्रकार से ''कैवल्य का स्वरूप'' समझने हेतु हमें उपरोक्त ग्रंथों का अध्ययन अनिर्वाय हो जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पतंजलि योगदर्शन, गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र।
2. पातंजलयोगप्रदीप, श्रीस्वामी ओमानन्द तीर्थ, गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र.।
3. पातंजलयोगसार डॉ. साधना दौनेरिया, प्रथम संस्करण,2011, मधुलिका प्रकाशन, इलाहाबाद, उ.प्र.।
4. आध्यात्म विद्या का अमृत कलश, नन्दलाल दशोरा, संस्करण–2010, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।
5. ऐतरेयोपनिषद – 108 उपनिषद्, ज्ञानखण्ड, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र.।
6. बृहदारण्यकोपनिषद् –108 उपनिषद्, ज्ञानखण्ड, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र.।
7. छान्दोग्योपनिषद् –108 उपनिषद्, ज्ञानखण्ड –युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र.।
8. माण्डूक्योपनिषद – 108 उपनिषद्, ज्ञानखण्ड– युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ.प्र.।
9. वेदान्त दर्शन, (ब्रह्मसूत्र), गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र.।
10. भारतीय दर्शन– आलोचन और अनुशीलन, चंद्रधर शर्मा, संस्करण–1998 – मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।

[17] (प.यो.सू. 2/2)